अकाल चलाणे के समय की गुरसिख रीति

अनुवादक : मंगत सिंघ 'राही'

मृत्यु क्या है? मृत्यु शरीर से आत्मा के अलग होने को कहते हैं। जब आत्मा शरीर को छोड़ जाती है तो ''जीव'' की मृत्यु हो जाती है। जीवात्मा इस पांच भूतक शरीर से निकल कर या तो प्रभु में विलीन हो जाती है या किसी अन्य योनि में प्रवेश कर जाती है।

मृत्यु प्रभु के हाथ में है, किसी भी जीव की मृत्यु का कारण बनाने वाला प्रभु स्वयं ही है। वह जीवों को अपने आदेश से ही संसार से वापिस बुला लेता है। जन्म-मृत्यु उसके अपने हाथ में है।

गुरबाणी फुर्मान है :

घले आवहि नानका, सदे उठी जाहि॥

(सलोक, महला २, पृष्ठ १२३९)

मृत्यु का समय निश्चित है। जो भी जीव संसार में आता है वह अपनी मृत्यु का समय लिखवा कर आता है :

मरणु लिखाइ मंडल महि आए॥

(धनासरी, महला १, पृष्ठ ६८५)

जिस मनुष्य की आयु पूर्ण हो जाए तथा निश्चित समय आ जाए तब वह ''मृत्यु'' के वार से बच नहीं सकता :

जिस की पूजै अउध, तिसै कउणु राखई॥

(फुनहे, महला ४, पृष्ठ १३६३)

मृत्यु से कोई किसी को नहीं बचा सकता। यह समय आने पर

आनी ही आनी है। मृत्यु अटल है :

आवतु किनै न राखिआ, जावतु क्यों राखिआ जाइ॥

(महला १, पृष्ठ १३२९)

जब मृत्यु अटल है, आनी ही आनी है तब इससे क्यों डरा जाए, चिंता क्यों की जाए? यह किसी एक को तो आनी नहीं, सभी को आनी है :

चिन्ता ता की कीजीअै, जो अनहोनी होइ॥

इहु मारगु संसार को, नानक थिरु नही कोइ॥

(सलोक, महला ९, पृष्ठ १४२९)

जो आइआ सो चलसी, सभु कोई आई वारीअै॥

(आसा की वार, महला १, ४७४)

मृत्यु कितनी आश्चर्यजनक है? जो सगे सम्बन्धी मनुष्य से बेहद प्यार करते हैं, वही उसे अपने हाथों से जला आते हैं।

गुरू तेग बहादुर जी फुर्माते हैं :

घर की नारि बहुतु हितु जा सिउ,

सदा रहत संग लागी॥

जब ही हंस तजी इह कांइआ,

प्रेत प्रेत कर भागी॥

(सोरठि, महला ९, पृष्ठ १३४)

जिस शरीर को मनुष्य संभाल कर रखता है, उसे जला दो, मिट्टी में दबा दो, उसे कुछ महसूस नहीं होता। मृत्यु, राजा तथा रंक, मुर्ख तथा पंडित, पापी तथा धर्मी, सभी को आनी ही है। पानी के बुलबुले की तरह मनुष्य प्रतिदिन जन्म लेते हैं तथा मरते हैं। करोड़ों तथा अरबों मनुष्यों में कुछ हस्तियां हैं जिनकी याद इतिहास

में शेष रह जाती है।

मृत्यु का कारण? मृत्यु का कारण कोई भी हो सकता है- साधारणतया मरना, किसी रोग से बचपन या जवानी में मरना। अचानक मृत्यु, हृदय की धड़कन बंद होने से या किसी दुर्घटना से शारीरिक या मानसिक दुखों से तंग आ कर आत्म हत्या करना। लड़ाई या युद्ध के मैदान में शरीर त्यागना। धर्म, नेकी तथा उच्च आदर्श के लिए शहीद होना।

कारण कोई भी हो परन्तु यह वास्तविकता है कि मृत्यु अकाल पुरख के हुक्म में ही होती है। उसके हुक्म के बिना मनुष्य शरीर नहीं त्याग सकता। मृत्यु का कारण बनाने वाला भी वह स्वयं ही है :

कारणु करते वसि है, जिनि कल रखी धारि॥

(माझ की वार, महला १, पृष्ठ १४८)

साधारणतया मनुष्य मृत्यु से क्यों डरते हैं, इसके कई कारण हैं :

(क) इस ख्याल से कि मरने से जीवन का अंत हो जाता है।

(ख) स्त्री, पुत्र, सगे सम्बन्धीओं से सदा के लिए बिछुड़ने का ख्याल।

(ग) भोग-विलास तथा पदार्थों में मन का अत्याधिक लिप्त होना।

(घ) मरने वाले मनुष्य की अंतिम दर्दनाक अवस्था।

सतिगुरू साहिबान ने सिख को बाणी का उपदेश करके, अमृत छका कर अकाल पुरख का सुमिरन बता कर मृत्यु के भय से मुक्त कर दिया है। सिख के लिए मृत्यु एक परिवर्तन है। सिख हुक्मी बंदा है, वह मृत्यु को अकाल पुरख की रज़ा समझता है। वह इन गुरूवाक्यों को भली भान्ति दृड़ करता है:

जमणु मरणा हुकमु है, भाणै आवै जाइ॥

(आसा, महला १, पृष्ठ ४७२)

अकाल चलाणे के समय की गुरसिख रीति

1. प्राणी यदि किसी खाट आदि पर चलाणा कर जाए तो उसे नीचे नहीं उतारना। खाट-बिस्तर आदि के लिए किसी प्रकार का व्यर्थ वहम-भ्रम करके उसे नष्ट करने की आवश्यकता नहीं है। उसके चलाणे *(मृत्यु)* के समय किसी प्रकार का दिया, बत्ती, पिण्ड, पत्तल या गाए आदि के दान के चक्कर में नहीं पड़ना। तुलसी, गंगा जल अथवा सालगराम, किसी प्रकार का भी प्रयोग नहीं करना। गरुड़ पुरान की कथा भी गुरू-घर में वर्जित है।

2. रोना चिल्लाना नहीं। प्राणी के चलाणे के उपरांत उस के पास गुरबाणी का पाठ, कीर्तन या वाहिगुरू का जाप आरंभ कर देना है। ''**जंमणु मरणा हुकमु है भाणै आवै जाइ**'' के गुरवाक्य अनुसार भाणे को प्रसन्नतापूर्वक स्वीकार करना है। प्राणी का इतना ही किसी से संबंध था, क्योंकि ''**संजोगु विजोगु दुइ कार चलावहि लेखे आवहि भाग॥**'' किसी प्रकार का रोना, पीटना या विलाप करना आत्मिक कमजोरी का सूचक तथा गुरमति सिद्धांत के विरुद्ध है।

गुरबाणी का फुर्मान है :

जिनी पछाता हुकमु, तिन कदे न रोवणा॥

(गूजरी की वार, महला ५, पृष्ठ ५२३)

सतिगुरि भाणै आपणे, बहि परवारु सदाइआ॥
मत मै पिछै कोई रोवसी, सो मै मूलि न भाइआ॥

(सदु, पृष्ठ ९२३)

3. प्राणी चाहे कम आयु का हो या अधिक का, सिख धर्म

में दाह-ससकार की मर्यादा है क्योंकि शरीर को संभालने की यही उत्तम विधि है। हां, यदि कहीं ससकार (जलाने) का प्रबंध न हो सकता हो तो शरीर की संभाल किसी भी योग्य ढंग से की जा सकती है, किसी प्रकार का भ्रम नहीं करना, न ही ससकार के समय दिन या रात्रि का कोई भ्रम करना है।

4. मृत-शरीर को स्नान करा कर, स्वच्छ वस्त्र पहनाए जाएं, तख्ते पर लेटा कर चलाणे की अरदास की जाए। स्नान समय तक पाठ आदि होते रहना चाहिए। ककार शरीर से अलग नहीं करने। ससकार के लिए चलने से पूर्व आवश्यकता अनुसार घर में कोई चाय-पानी या चूल्हा, गैस जलाने का भी कोई वहम नहीं करना। किसी बुजुर्ग सज्जन की मृत्यु पर विमान (बुढा मरना) आदि निकालना भी विवर्जित है।

5. शमशान भूमि तक रास्ते में शब्द-कीर्तन ही करना है, रास्ते में या वहां पहुंच कर ब्राह्मणी मत अनुसार विशेष बनाए गए थड़े पर अर्थी रख कर कोई अधमारगी या घड़ा आदि तोड़ने की रस्म नहीं करनी।

6. शमशान भूमि पहुंचने पर चिखा की तैयारी तक जपुजी साहिब का पाठ सभी ने मिलकर करना है। चिता के आसपास किसी प्रकार के केसर आदि छिड़कना या फूल आदि के प्रपंच नहीं करने। बच्चा, बूढ़ा या किसी कंवारी कन्या या सुहागन स्त्री की मृत्यु पर अलग-अलग कर्म केवल ब्राह्मणी कर्म हैं, गुरू-घर में इनका कोई स्थान नहीं। जपु जी साहिब के पश्चात् अरदास करके चिता को अग्नि भेंट किया जाए। आग कोई भी संबंधी या सज्जन लगा सकता है, विशेष रूप से बेटे द्वारा आग लगाने का कोई नियम नहीं।

7. जब तक चिता ने आग की लपेट में पूरी तरह आना है, निकट ही थोड़ी दूरी पर बैठ कर शब्द-कीर्तन या समय अनुसार

गुरमति रीति पर प्रकाश डाला जाए तथा अनमती प्रभावों से सुचेत किया जाए। तिनके, घास आदि तोड़ना, कपाल क्रिया (सिर में लाठी मारना) या किसी प्रकार का कोई अन्य ब्राह्मणी कर्म नहीं करना।

8. जब चिता पूरी तरह आग की लपेट में आ जाए तो ''सोहिला'' बाणी पढ़कर, अरदास करके मित्र, संबंधी तथा संगत वापिस अपने अपने घर चले जाएं। घर पहुंच कर स्नान आदि आवश्यक नहीं तथा न ही पानी के उलटे-सीधे छींटे ही अपने ऊपर डालने-डलवाने हैं। यह कर्म केवल सुच्च-भिट्ट के वहमों से जुड़े हैं तथा वरुण देवता की पूजा से संबंधित हैं। गुरसिख का इन वहमों-भ्रमों से कोई संबंध नहीं है। हां, जो सज्जन काफी समय से मृतक प्राणी के पास बैठे रहे तथा स्नान पानी नहीं कर सके, अपनी शारीरिक चुस्ती लाने के लिए स्नान कर सकते हैं।

9. ससकार के पश्चात् घर आ कर किसी नजदीक के गुरद्वारे में श्री गुरू ग्रंथ साहिब जी का सहिज पाठ आरंभ कर देना चाहिए। उचित यही है कि पाठ स्वयं मिल कर किया जाए तथा अपने घर में ही भोग वाले दिन तक नियम से प्रतिदिन कुछ समय कीर्तन तथा गुरबाणी आशय को समझने के लिए किसी सूझवान तथा योग्य सज्जन से गुरबाणी कथा का प्रवाह चलाया जाए।

10. ससकार से तीसरे चौथे दिन इस अनुमान से कि चिता ठंडी हो चुकी हो, उस पर पानी का छिड़काव करके (ताकि कहीं चिता की गर्मी कोई हानि न पहुंचाए) सारी राख को अस्थियों सहित एकत्र करना है। इस कार्य के लिए प्रात:-सायं, बुध, इतवार या किसी प्रकार के दिन, वार का भ्रम नहीं करना तथा न ही अस्थियां (फूल) ही चुननी हैं। प्रतिदिन प्रात: या चौथे वाले दिन विशेष तौर पर कच्ची लस्सी का छींटा नहीं देना तथा न ही अंगीठे वाले स्थान पर धूप आदि जलानी है, इस धूप आदि का संबंध केवल

मढ़ी पूजा के साथ है जो गुरू घर में प्रवान नहीं। गुरू घर में इस सारे कार्य का नाम ''चौथा करना'' नहीं बल्कि ''अंगीठे की संभाल'' है। अस्थियां अथवा फूल बिल्कुल नहीं चुनने।

फूलों को विशेष तौर से कीरतपुर या हरिद्वार पहुंचाना केवल मनमत तथा अज्ञानता है। अंगीठे की सारी राख (अस्थियों सहित) को किसी नज़दीक बहते पानी में बहा देना है। यदि पानी नज़दीक न हो तो निकट ही कहीं गहरा खड्डा खोद कर उसमें दबा देना है।

11. चलाणे के दसवें दिन, भोग की मर्यादा है। दसवां दिन एक अनुमान है, कोई बंदिश नहीं। सुविधा अनुसार आगे-पीछे कोई छुट्टी आदि का दिन नियत किया जा सकता है। यह कुछ दिनों का अंतर इसलिए है ताकि सगे संबंधीयों को उचित प्रकार से सूचित किया जा सके।

भोग के दिन तक घर में जहां पाठ हो रहा है, वहां ही आने जाने वाले को बैठ कर पाठ सुनने या करने की प्रेरणा देनी है। कोई अलग स्थान नियत नहीं करना तथा न ही फूहड़ी आदि ही डालनी है।

12. भोग वाले दिन ब्राह्मणी मत की नकल करके बर्तन, बिस्तर, फल, मंजे आदि वस्तुएं नहीं देनी। यदि कोई अनजान ऐसी भूल करे तो बिना लिहाज़ वापिस कर देना प्रबंधकों का कार्य है। ऐसे बहाने कि किसी की श्रद्धा कैसे तोड़ दी जाए या गुरुद्वारे की कोई वस्तु बन जाएगी, अपनी प्रबंधकीय अयोग्यता का प्रकटाव तथा गुरू के आदेशों का सीधा उल्लंघन है। ऐसे मनमत के कार्यों के विरुद्ध गुरबाणी में कठोर आदेश हैं।

प्रबंधकीय वीरों की सेवा में : प्रबंधक वीरों की बड़ी ज़िम्मेंवारी है कि गुरू घर के प्रबंध को गुरू आशय के अनुसार चलाया जाए।

उन का कर्तव्य बनता है जब ऐसे अवसरों पर अज्ञानी लोग बर्तन, बिस्तर, खाट, फल आदि गुरुद्वारे को भेंट करे तो कठोरता से मना कर दें या ऐसा न करने के लिए पहले से ही प्रेरणा अथवा विनती कर दें। ऐसा सोचना अथवा कहना कि इस विधि से गुरद्वारे के लिए कोई वस्तु बन जाती है, गलत कर्म है। संगत कामधेनु है। एक अपील करके गुरद्वारे के लिए बढ़िया से बढ़िया बर्तनों के सैट गुरू के लंगर तथा संगत की समय-समय की आवश्यकता के लिए एकत्र किए जा सकते हैं तथा किए भी जा रहे हैं। तब यह बात व्यर्थ के बहाने के अतिरिक्त कुछ भी नहीं। ऐसे अवसरों पर गुरद्वारों में पहुंची रजाईयों व तलाईयों के दर्शन किए जाएं तो सोचना पड़ता है कि ऐसी वस्तुएं गुरद्वारों के सम्मान के योग्य भी हैं कि नहीं? केवल एक कर्म कांडी ब्राह्मणी रीति ही पूरी की गई है। फिर ब्याह-शादियों के समय लाखों खर्चे करके भी गुरद्वारों के लिए कभी किसी को बर्तन बिस्तर याद नहीं होते, परन्तु ब्राह्मणों की डाली लीक पर ऐसे समय यह बर्तन बिस्तर केवल इस प्रकार हैं जैसे किसी के पिता जी उपदेश करें कि बेटा चोरी व अत्याचार की कमाई नहीं करनी तथा सपुत्र जी डाके मार कर गरीबों का खून चूस कर कमाई करे तथा पिता जी की झोली में रख कर उन की प्रसन्नता लेनी चाहे, जो नहीं मिल सकती। शराब की बोतल पर शरबत का लेबल लगा कर वह शरबत नहीं बन सकता।

अरदासीए सिंघों की सेवा में : अज्ञानता या घर वालों की अधिक से अधिक प्रसन्नता प्राप्त करने के लिए ताकि उन्हें अधिक भेटा मिले, हमारे बहुत से अरदासीए वीर, ऐसे अवसरों पर अरदास करते सुने गए हैं, ''हे सच्चे पातशाह! इस किए अखण्ड पाठ, कीर्तन तथा दी समूह वस्तुओं का महातम बिछड़ी आत्मा को प्राप्त हो।'' यह एक बहुत बड़ी भूल वाली बात है। जो गुरू पातशाह १४३० पृष्ठों द्वारा दृढ़ करवा रहे हैं तथा **''जे मोहाका घरु मुहै''** वाले

आसा की वार के सलोक द्वारा उदाहरणें दे कर समझा रहे हैं कि **''नानक अगै सो मिलै जि खटे घाले देइ॥''** उस ही गुरू पातशाह की हजूरी में खड़े होकर संगत को प्रभाव देना कि महातम ट्रांसफर हो जाएगा, एक घिनौना तथा अज्ञानता वाला कर्म है। अरदास केवल दो पहलुओं पर ही करनी है। पहला जो हमारा इखलाकी कर्त्तव्य है तथा जिसका हमें पातशाह ने अधिकार बख्शा है : ''हे सच्चे पातशाह! बिछुड़ी आत्मा को अपने चरणों में निवास बख्शो'' तथा दूसरा ''परिवार तथा संबंधियों को भाणा मानने का बल बख्शो।''

यह बात भली भान्ति समझ लेनी चाहिए कि प्राणी की मृत्यु के पश्चात् जो भी हम ने गुरबाणी के पाठ, कीर्तन, कथा का प्रवाह चलाना या दीवान लगाना है उसका संबंध घर वालों, संबंधियों तथा मित्रों से है, जिन्हें बिछुड़ने की असह चोट लगी है, ताकि वे गुरू की गुरबाणी द्वारा इस जन्म-मृत्यु के सत्य की व्याख्या समझ सकें तथा भाणे में जीने का बल तथा सामर्थ्य प्राप्त कर सकें।

13. भोग के पश्चात् कोई सत्रवां, बरसी या श्राद्ध आदि नहीं करना।

वरीणा (बरसी) : गरुड़ पुराण की विचारधारा को गुरू साहिब ने बिल्कुल ही प्रवान नहीं किया। गरुड़ पुराण में मृत्यु के पश्चात् प्राणी के लिए 46000 योजन एक अत्यंत लम्बा भयानक रास्ता बताया गया है जिसे पूरा करने में 360 दिन लगते हैं। रास्ते में यमदूतों की मार, भूख, प्यास, घोर अंधकार, धूप, वर्षा सहन करनी पड़ती है, जहां बाद में दिए हुए दीपक, भूख के लिए पिंड, पत्तल, छाता, अन्न, बर्तन, बिस्तर की आवश्यकता बताई गई है। अन्त में 550 मील चौड़ी एक विष्टा, पीक, रक्त, गंदगी की भरी हुई नदी प्राणी को तैरनी पड़ती है। यदि ब्राह्मण को गऊ दान की है तब उसकी पूंछ पकड़ कर प्राणी तर जाते हैं। अन्य उस में ही डुबकियां खाते

रहते हैं।

अन्त इतनी भयानक परिस्थितियों में से निकल कर आगे पित्तर लोक आता है जहां पहले मर चुके बड़े सम्बन्धी (पित्तर) अपने संबंधी को लेने आते हैं। यदि यह 360 दिन से पूर्व अथवा 11वें मास वरीणा (बरसी) नहीं की जाती तो प्रतीक्षा कर रहे पित्तर निराश हो कर पित्तर लोक के दरवाजे बंद कर देते हैं तथा प्राणी अपने पीछे के संबंधियों पर अपना क्रोध प्रकट करता है। भूत-प्रेत बन कर उन्हें अनेक प्रकार के कष्ट देता है।

तनिक सोचो!

एक अनुमान अनुसार एक मिनट में, संसार में लाखों लोग मरते हैं। अत: कोई समय बचता ही नहीं जब किसी के सम्बन्धी उस की प्रतीक्षा न कर रहे हों। इस प्रकार कहे जाने वाले पित्तर लोक के किवाड़ कभी बंद ही नहीं होने चाहिएं।

इस प्रकार के गपोड़ो का गुरबाणी में भरपूर खंडन है तथा गुरमति ने ऐसे पित्तर लोक के अस्तित्व को नहीं माना। इसलिए गुरू घर में इस ग्यारवें मास वाले वरीणे (बरसी) का कोई स्थान नहीं है।

श्राद्ध : कुछ भोले-भाले गुरसिख, प्राणी की मृत्यु उपरांत श्राद्धों के वहम में फंस जाते हैं तथा ब्राह्मण द्वारा नियत विशेष श्राद्धों के दिनों में गुरद्वारों में खास तौर पर प्राणी के लिए फल, मिठाईआं, कड़ाह, मीठे चावल आदि के लंगर लेकर पहुंचते हैं या कम से कम प्राणी के लिए कड़ाह प्रसाद की परची अवश्य कटवाते हैं। यह सब गुरू आश्य के विपरीत तथा भेड़-चाल के अतिरिक्त और कुछ नहीं। प्रबंधक वीरों को इस ओर से सावधान रहने की आवश्यकता है तथा इस दुरमति को कठोरता से रोकना बनता है।

सबसे अधिक करुणामयी अवस्था उन अज्ञानियों की होती है जो नीली दस्तारें पहने खुले दाहड़े, गले में काले गातरे, कृपाण तथा

कहते हैं ''जी, आज हम फलां के घर लंगर *(श्राद्ध)* छकने जा रहे हैं।'' शर्म आ जाती है, *एक* तो गुरू के इतने ऊंचे सुच्चे बाणे की बेअदबी तथा दूसरा गुरसिखी नियमों का *खुल्लम खुला* अपमान। ऐसे लंगर छकाने वालों को भी यह लंगर वर्ष भर तो याद नहीं आता, कहे जाने वाले श्राद्धों के दिनों में ही क्यों? तब यदि कोई सूझवान आगे से उत्तर दे दे ''अच्छा जी, लंगर तो हम अवश्य छक लेंगे परन्तु सुबह नहीं, सायंकाल के समय, तब ज्ञात होता है कि लंगर है कि श्राद्ध, क्योंकि श्राद्ध करना प्रातःकाल सुच्चे मुख ही आवश्यक है, श्राद्ध के नियमों के अनुसार।

श्राद्धों के बारे कुछ अन्य कल्पित पित्तर लोकों के भ्रम को निकालने हेतु ही नानक पातशाह विशेष तौर पर हरिद्वार गए तथा पश्चिम की ओर पानी उछाल कर उस अज्ञानता को झकझोरा। इसी अज्ञानता के समूल नाश हित गुरू नानक साहिब गया के स्थान पर गए तथा **''दीवा मेरा एक नामु''** *(पृष्ठ ३५८)* वाला शब्द उच्चारण करके समझाया कि भाई! यह दिया बट्टी, पिंड पत्तल मनसाणे, किरिया, फूल चुन कर हरिद्वार पहुंचाने, श्राद्ध करने या मरते समय विशेष तौर पर बनारस आदि चले जाना केवल ढोंग है। कर्ते का सुमिरण ही जीवन को सफल करने का तथा मनुष्य को इन प्रचलित अज्ञानताओं से निकालने का *एकमात्र* साधन है। पांचवें पातशाह ने 'सुखमनी' की दूसरी अष्टपदी के पहले बंद में **'जह मात पिता सुत मीत न भाई'** तथा चौथे बंद में **'जिह मारग के गने जाहि न कोसा'** द्वारा भी गरुड़ पुराण द्वारा डाले गए अनेकों वहम-भ्रमों तथा शंकाओं से आज़ाद होकर करते की स्तुति अथवा नाम के साथ जीवित रहते ही जुड़ने की प्रेरणा की है।

'जीवत पित्तर न मानै कोऊ मूए सराध कराही' वाले शब्द द्वारा कबीर साहिब ने अज्ञानता में फंसे लोगों को यहां तक प्रश्न किया है कि हे भूले हुए लोगो! तुम कहते हो कि श्राद्ध कराने

से घर में कुशलता रहती है। जो लोग इन श्राद्धों के भ्रम-जाल में फंसे हुए हैं , सोचें कि श्राद्ध करने के पश्चात् क्या उनके घर में लोग आगे से मरने बंद हो जाते हैं या अन्य दुख दुर्घटनाएं टल जाती हैं? यदि नहीं तो फिर किस कुशलता के लिए इन श्राद्धों के वहमों में फंसे हुए हो?

14. कोई भी कर्म आचारजी से पूछ कर या उस के बताने पर नहीं करना। केवल सिख रीति, गुरबाणी अथवा सिख रहित मरयादा अनुसार ही सब कुछ करना है।

सुखणा : जब कोई स्नेही अंतिम घड़ियों में हो तब सम्बन्धी चालीहे, अखंड पाठ तथा न जाने क्या-क्या सुखणा *(मन्नत)* मानते हैं। यदि प्राणी बच जाए तो समझते हैं कि उनकी इस सुखणा *(मन्नत)* के कारण प्राणी बच गया है और यदि चलाणा कर गया तो वाहिगुरू को उलाहना देते हैं। कई अज्ञानी तो यहां तक कहते सुने जाते हैं कि अब वे कभी परमात्मा को नहीं मानेंगे या कभी गुरूद्वारे नहीं जाएंगे। यदि परमात्मा होता तो उनकी यह सुखणा अवश्य पूरी होती।

वास्तव में यह सुखणा उनकी अपनी ही भूल है। सुखणा *एक* प्रकार की परमात्मा के साथ शर्त अथवा परमात्मा के साथ बराबरी करने के समान है तथा पुराना ब्राह्मणी विश्वास है। गुरू घर में तो यह फैसला है **''खसमै करे बराबरी फिरि गैरत अंदरि पाइ॥''** तथा **''साहिब सेती हुकमु न चलै कही बणै अरदासि॥''** *(आसा की वार)* गुरबाणी द्वारा भी यह बात पूर्ण रूप से दृढ़ करा दी गई है कि **''संबति साहा लिखिआ मिलि करि पावहु तेलु''** *(सोहिला)* **''सभनी छाला मारीआ करता करे सु होइ''** *(आसा की वार)*।

इन सुखणा आदि के विश्वास को तो गुरू पातशाह ने व्यर्थ की छलांगें लगाना ही बताया है तथा नियत समय की बात को आगे पीछे न हो सकने की बात समझाई है, बल्कि यहां तक लिखा

है : ''**जिन की चीरी दरगह पाटी, तिना मरणा भाई॥**''

(पृष्ठ ४१८)

अथवा :

''**धुरि लिखिआ परवाणा फिरै नाही॥**'' *(सदु, १७३)*

फिर चालीहे आदि को तो गुरू पातशाह ने केवल हठ कर्म तथा पाखंड ही कहा है। जिन कार्यों को गुरू पातशाह पाखंड तथा हठ कर्म बता रहे हैं उन कार्यों के करने वाले, गुरदेव को भला कैसे अच्छे लग सकते हैं? हमें तो गुरू नानक के प्यारे सिख बनना है, इसलिए गुरू हुक्मों के अनुसार जीवन जीना है।

स्वप्न : जब मृत व्यक्ति के साथ अत्यंत मोह होता है तथा मन की गुरबाणी के द्वारा तैयारी भी नहीं होती तो सोते जागते उस मृत प्राणी के स्वप्न बार-बार आते हैं। प्राणी का स्वरूप आखों के समक्ष बार-बार ऐसे आता है जैसे सचमुच ही प्राणी एक या दूसरे रूप में हमारे आस-पास ही हो। कई बार तो मृत व्यक्ति की स्पष्ट आवाज़ें भी कानों में पड़ती महसूस होती हैं, जो केवल अपने ही मनोवेग होते हैं। सच्चाई तो यह है कि जिस शरीर का ससकार हम अपने हाथों कर चुके हैं तथा जो हमारे देखते राख का ढेर हो गया वह भला फिर कैसे हमारे समक्ष आ गया? इस तत्थ को विचारे बिना हम अपने सपनों के वेग में बह जाते हैं तथा फिर इन के उपाय के लिए कुछ ढोंगियों के जाल में फंस जाते हैं। घर की अवस्था पहले ही मृत्यु के कारण बिगड़ी हुई होती है तथा मानसिक गुलामी के कारण अन्य परेशानियां खड़ी कर लेते हैं। जिनके मन पर गुरबाणी की रंगत चढ़ी होती है पहले तो उन्हें ऐसे सपने आते ही नहीं तथा यदि कहीं थोड़ा बहुत ऐसा मोहवश हो भी तो ऊपर ऊपर से होता है। परन्तु जिन कमज़ोर मन वालों को ऐसे सपने आते हैं वे भी समय के प्रभाव से अपने आप समाप्त हो जाते हैं। सपनों

से घबरा कर किसी उपाय आदि की आवश्यकता नहीं है।

बड़ों की इच्छा : कई बार कुछ सज्जन इस कारण कुछ कर्म-काण्डों में उलझे होते हैं कि यह उनके उस मृत प्राणी की इच्छा थी तथा उन्होंने उसकी आत्मिक शान्ति के लिए अवश्य पूरी करनी है। यह एक और बड़ी अज्ञानता है।

तूं मेरा पिता, तूं है मेरा माता॥
तूं मेरा बंधपु, तूं मेरा भ्राता॥ *(पृष्ठ १०३)*

गुरदेव माता, गुरदेव पिता,
गुरदेव सुआमी परमेसुरा॥ *(बावन अखरी)*

के महावाकों के अनुसार हमने केवल गुरू की बात ही माननी है। जब कोई मत अथवा शिक्षा लेने की बात है तो गुरू पातशाह ही हमारे माता, पिता, बहिन, भाई अथवा सब कुछ हैं। किसी बाह्य प्रभाव के कारण, व्यर्थ के फोकट विश्वासों या वहम-भ्रम के कारण यदि हमारे पूज्य सम्बन्धी मृत्यु से पहले कोई गलत आदेश भी कर जाते हैं जो कि गुरू आशय-गुरसिखी या गुरबाणी नियमों के विपरीत है तब उनका वास्तविक सत्कार उस बात को न मानने में ही है। अन्तत: हमें उस गुरू के सिख होने का मान है, जिसने अपने पिता-पुरखी जनेऊ पहनने के कार्य को करने से भरी सभा में स्पष्ट इन्कार कर दिया। जब तलवंडी वापिस आने पर कुछ अज्ञानी लोगों ने पातशाह को माता-पिता का श्राद्ध करने की सलाह दी तब पातशाह ने '**आइआ गइआ मुइआ नाउ॥ पिछै पतलि सदिहु काव॥ नानक मनमुखि अंधु पिआर॥ बाझ गुरू डुबा संसारु॥**' *(माझ की वार)* वाला फुरमान किया।

अन्तत: हम उस गुरू अंगद देव जी के सिख हैं जिन्होंने गुरू दर पर आने के पश्चात् प्रति वर्ष देवी की यात्रा पर जाने वाला

पैतृक सदा के लिए त्याग दिया। फिर हम उस गुरू अमरदास पातशाह के सिख हैं जिन्होंने गुरू नानक के दर पर आने के पश्चात् प्रति वर्ष गंगा स्नान तथा मृतकों की अस्थियां हरिद्वार पहुंचाने का कार्य केवल छोड़ ही नहीं दिया बल्कि गुरू पद को प्राप्त होने के पश्चात् गुरू ग्रंथ साहिब जी के पृष्ठ *923-924* पर दर्ज **''सदु''** बाणी द्वारा उपरोक्त विषय पर हमें विशेष उपदेश व आदेश दिए तथा गुरबाणी के गुरू होने की बात को दृढ़ करवाया।

दुख तो इस बात का है जब कोई प्राणी चलाणा कर जाए तो हम उसी सदु बाणी को तीन-तीन या चार-चार बार पढ़ते हैं परन्तु अर्थ भावों को समझे बिना प्रत्येक कार्य गुरू हुक्मों के विरुद्ध कर रहे होते हैं। केवल सिखी स्वरूप को धारण करके ही हम गुरू की नज़रों में प्रवान होना चाहते हैं जो तीन काल में भी संभव नहीं।

पातशाह का हुक्म है :

सो सिखु सखा बंधपु है भाई,
जि गुर के भाणे विचि आवै॥
आपणै भाणै जो चलै भाई,
विछुड़ि चोटा खावै॥ *(पृष्ठ ६०१)*

विधवा आडम्बर :

जो आइआ सो चलसी सभु कोई आई वारीऐ॥

(पृष्ठ ४७४)

के महांवाक्य अनुसार यह शरीर सब ने छोड़ना है। किसी ने पहले और किसी ने बाद में। यह केवल करता ही जानता है। करते के हुक्म अनुसार जब कहीं पति कालवश हो जाए तो पत्नी को अनेक प्रकार के विधवा आडम्बर करने के लिए मजबूर किया जाता है।

उस बेचारी को कलमूही, कुलच्छनी, खसमाखाणी, डायन, सर्पनी तथा न जाने क्या-क्या सरटीफिकेट दिए जाते हैं। विशेषकर सफेद वस्त्र पहनने के लिए विवश किया जाता है तथा रंगीन वस्त्रों के विषय में उस पर विशेष पाबंदीआं लग जाती हैं क्योंकि उस विचारधारा अनुसार सफेद वस्त्र अफसोस के सूचक हैं। दूसरी ओर पतिदेव को अधिकार है कि वह स्त्री की चिता ठंडी होने से पूर्व ही कोई नया रिश्ता गांठ ले। जब तक धर्म के ठेकेदारों का वश चला, कल की विवाहिता को सती की रस्म के कुकर्म आधीन उठा उठा कर चिताओं में फेंका जाता रहा। तीसरे पातशाह ने इस बुराई को अकबर बादशाह को कह कर विशेष कानून द्वारा बंद करवाया।

गुरू घर में स्त्री-पुरूष को एक दूसरे का पूरक कहा गया है तथा किसी एक की आवश्यकता दूसरे से कम नहीं। सच्चाई तो यह है कि एक के पश्चात् दूसरे की जीवन-गाड़ी वास्तव में ही अत्यन्त कठिन हो जाती है। इससे अधिक वर्तमान सामाजिक व्यवस्था अनुसार यदि पति कालवश हो जाए तो जितनी हानि तथा चोट स्त्री को होती है उतनी शायद उसके मां-बाप, बहिन-भाई को भी नहीं होती। उसके दुख और चोट में उसका कुछ साथ देने के स्थान पर उसके जीवन को और भी दूभर कर देना तथा समाज व परिवार में उसे अधिक से अधिक अपमानित करना, समाज के माथे पर किसी बड़े कलंक से कम नहीं। गुरू घर में ऐसे किसी भी विधवा आडम्बर के लिए कोई स्थान नहीं बल्कि आवश्यकता अनुसार स्त्री के पुनर्विवाह का भी विधान है।

अंतिम चेतावनी : ऐसे अवसरों पर कुछ सज्जन जिनका वेश तो सिखी का ही होता है तथा कुछ अवस्थाओं में अमृतधारी तथा शिक्षित भी दिखाई देते हैं, परन्तु प्रत्येक कर्म गुरू आशय के उल्ट करने तथा करवाने में अपना बड़प्पन समझते हैं। प्रत्येक मनमति

तथा दुरमति के लिए दूसरों को उत्तेजित करते हैं बल्कि यहां तक कहते सुने जाते हैं "छोड़ो जी! गुरू के आदेशों पर कौन चलता है? बाणी तो केवल पढ़ने के लिए है। दुनिया (बिरादरी) के साथ भी तो चलना होता है।" जो सज्जन गुरू हुक्मों के उल्ट ऐसे ढीठता के बोल बोलने से भी नहीं चूकते, उनके भीतर सिखी तथा गुरू घर का कितना सत्कार हो सकता है, अनुमान लगाते देर नहीं लगती। ऐसे सज्जनों को बहुरूपिए तो कहा जा सकता है, गुरसिख नहीं। संगतों को ऐसे बहुरूपियों से सावधान रहने की अधिक आवश्यकता है।

श्रद्धांजली

मृतक प्राणी को श्रद्धांजली भेंट करने का चलन कब और किस प्रकार आरंभ हुआ, इस विषय में निश्चित रूप से तो कुछ नहीं कहा जा सकता, परन्तु देखा-देखी यह बुरी रीति कड़वी बेल की भांति दिनों-दिन बढ़ती ही जा रही है। कोई घराना बड़ा हो या छोटा, आस्तिक हो या नास्तिक, धर्मी हो या अधर्मी प्रत्येक चाहने लगा है कि उसके मृतक सम्बन्धी को श्रद्धांजली अवश्य भेंट की जाए।

घर वालों की यह भी इच्छा होती है कि श्रद्धांजली भेंट करने वाला मनुष्य समाज में ऊंचा दर्जा रखने वाला हो या फिर स्टेज पर अच्छा बोल सकने वाला हो जो घर वालों की अच्छी प्रशंसा कर सकता हो तथा श्रोताओं पर भी अच्छा प्रभाव डाल सकता हो।

इस तरह के बोलने वाले लगभग प्रत्येक वर्ग में मिल जाते हैं जो लोगों का घर पूरा कर देते हैं।

मृतक प्राणी के आत्म-कल्याण हेतु रखे अखंड पाठ या सहिज पाठ के भोग के पश्चात् गुरबाणी का कीर्तन किया कराया जाता है तथा फिर श्रद्धांजलियों की लड़ी आरंभ हो जाती है। गुरू की

हजूरी में गुरमति विचार करनी, जीवन-मृत्यु का फलसफा संगतों को समझाना अच्छी तथा उत्तम बात है, परन्तु गुरू महाराज के हजूर जब मृतक प्राणी की प्रशंसा के पुल बांधते समय वक्ता आगा-पीछा ही भूल जाता है तथा ऐसी प्रशंसा करने लग जाता है जो उसमें होती ही नहीं तो यह बहुत बड़ा झूठ सुन कर दुख होता है।

ऐसी श्रद्धांजलीयां सुन कर लोग चेहरा नीचे करके हंसते तथा मज़ाक उड़ाते हैं। लोग इस प्रकार के गपोड़े सुन-सुन कर कई बार तो तंग हो जाते हैं क्योंकि वे मृतक प्राणी के गुण अवगण, स्वभाव तथा उसके किए गल्त कार्यों से भली-भांति परिचित होते हैं परन्तु बोलने वाला भी क्या करे? उसने तो सच्ची-झूठी कहकर घर वालों को भी खुश करना होता है।

कई बार यह भी देखने में आया है कि श्रद्धांजली देने वाला, मृतक के स्थान पर घर वालों की ही प्रशंसा करने लग जाता है तथा ऐसा प्रतीत होता है कि घर वालों ने यह समागम अपनी सिफतें कराने के लिए ही करवाया है।

ऐसे लोगों को झूठ बोलते हुए न तो श्री गुरू गरंथ साहिब जी के आदर-सत्कार ही प्रवाह होती है तथा न ही गुरू रूप संगत के समक्ष झूठ बोलते शर्म ही आती है। हालांकि संबोधन करते समय संगत को गुरू-रूप वे स्वयं ही कहते हैं।

ईमानदारी से देखा जाए तो ऐसी श्रद्धांजलीयां भेंट करके या सुनकर अपनी आत्मा की आवाज़ को ही समाप्त करना होता है, ज़मीर को दबाना होता है जो कि एक बहुत बड़ा दोष (घोर पाप) है।

अच्छे भले, पढ़े-लिखे तथा भद्र पुरुष भी अपने मृतक प्राणी की कल्पित (झूठी) श्रद्धांजलीयां सुन कर जहां प्रसन्न होते दिखाई

देते हैं, वहां बड़े शहरों में श्रद्धांजली भेंट करने के माहिर (जिन्होंने यह पेशा ही बना लिया है), ऐसे अवसर पर अच्छी माया प्राप्त करके जहां अपना व्यवसाय स्थापित कर रहे हैं वहीं यह भांड-नुमा लोग समय देख कर सुरताल अलापते हैं तथा श्रोताओं को मूर्ख बनाने का नीच प्रयत्न करते हैं।

यदि गंभीरता से सोचें तो मृतक की आत्मिक शान्ति तथा उसके परिवार को शान्ति तथा भाणा मानने का उपदेश गुरबाणी का पाठ, कीर्तन तथा गुरमति वीचार से अधिक अन्य कौन दे सकता है?

गुरबाणी के पाठ तथा अरदास से अधिक और सच्ची श्रद्धांजली हो भी क्या सकती है? परन्तु शोक! हम गुरू के सिख कहलाने वाले गुरबाणी को सही अर्थों में समझने समझाने का प्रयत्न ही नहीं करते तथा अरदास के महत्व को बहुतों ने समझा ही नहीं। यदि समझा है तो मचले बन कर प्रतिदिन नए ऐसे नाटक रच कर तथा देखकर अपना बहुमूल्य समय (मनुष्य-जन्म) नष्ट करते चले आ रहे हैं।

कुछ भी हो, गुरू महाराज के हजूर कीर्तन-कथा, विचारें तथा अरदास के अतिरिक्त मृतक प्राणी को दिखावे की श्रद्धांजलीयां भेंट करना, किसी पक्ष से भी गुरमति अनुसार उचित नहीं। यह केवल मनमति है, इसलिए यह बुरा चलन बिल्कुल बंद करना तथा करवाना चाहिए।

और देखें!

साधारणतया हमारे सिख घरों में किसी प्राणी की मृत्यु के समय भाई गुरदास जी की वारों में से ये पंक्तियां अवश्य पढ़ी जाती हैं :

गुरमुखि जनमु सवारि दरगह चलिआ॥
सची दरगह जाइ सचा पिडु मलिआ॥

(वार ११, पउड़ी १४)

इन पंक्तियों से यह प्रभाव लिया जाता है कि जो रूह हमसे बिछुड़ गई है वह गुरमुख थी। वह प्राणी अपना जन्म सफल कर के इस संसार से गया है तथा आगे परमात्मा की दरगाह में उस ने सच्चा पिड़ प्राप्त कर लिया है।

तनिक बीचार करें!

हमें कैसे ज्ञात हो गया कि बिछड़ी रूह को आगे परमात्मा के दर पर उच्च स्थान प्राप्त हो गया है?

बिछड़ी रूह ने उच्च स्थान प्राप्त करना है या गुरमुखों की लाईन में गिना जाना है या उसका जन्म सफल हुआ है या होना है, यह तो उसके अपने किए कर्मों के बल पर ही होना है न कि हमारी-आपकी श्रद्धांजलियों या इन उपरोक्त पंक्तियों के पढ़ने सुनने से होना है।

वास्तव में हम सब तो नहीं परन्तु अधिकांश लोग धर्म के कार्यों की तरह ऐसे मृतक समागमों में भी रसम के तौर पर सम्मिलत होते हैं तथा रसमी तौर पर ही पाठ-कीर्तन आदि कर, सुन लेते हैं। इस प्रकार के रस्मी तौर पर किए कार्यों का फल तथा प्रभाव भी वैसा ही होना है।

निष्पक्ष हो कर तनिक शांत चित से सोचें कि मृतक के भोग के समय इस प्रकार की श्रद्धांजलियां तथा शब्द पढ़ कर प्रत्येक को गुरसिख की पदवी देनी तथा उच्च स्थान प्राप्त करने का सरटीफिकेट दे देना कहां तक ठीक तथा उचित है?

इसका अर्थ यह हुआ कि मृतक अपनी जीवन यात्रा में जैसे भी अच्छे बुरे कार्य करता रहा, उन का उस की रूह पर कोई प्रभाव नहीं हुआ या नहीं होगा?

गुरबाणी तो कहती है :

जेही सुरति, तेहा तिन राहु॥ *(महला १, २४)*

तथा

जैसा सेवै, तैसो होइ॥ *(महला १, २२३)*

गुरबाणी अनुसार मनुष्य के किए कार्यों का प्रभाव उसकी रूह पर अवश्य पड़ता है तथा आगे फल भी उसे उसी प्रकार का मिलता है।

हम अपनी सारी ज़िन्दगी जितने भी झूठ बोलते रहें अपने कार्य में, व्यवहार में तथा लेन-देन के अन्य अनेकों कार्यों में सैंकड़ों हेरा-फेरीआं, झूठ-चालाकीयां तथा अन्य गलत बातें करते रहें तथा मृत्यु के पश्चात् हमारे बच्चे स्वयं कह दें या अन्य लोगों से कहलवा दें कि हमने सच्चा उच्च स्थान प्राप्त कर लिया है तब यह कितना निरादर है उस अकालपुरख का तथा उसके सच्चे उच्च स्थान का जो सच्चाई से विहीन मन को भी वहां मिल जाता है।

न तो हमारे बच्चे परमात्मा की यूनिवर्सिटी के वाईस चांसलर लगे हुए हैं जो हमें डिग्री दे देंगे कि हम जन्म संवार कर यहां से गए हैं तथा न ही परमात्मा की सच्ची अदालत के चीफ जस्टिस लगे हुए हैं जो यह फैसला सुना देंगे कि हमने सच्चा उच्च स्थान प्राप्त कर लिया है।

वास्तव में वाईस-चांसलर तथा चीफ जस्टिस अकाल पुरख स्वयं ही है, जो सर्वशक्तिमान होने के साथ-साथ सभी के दिलों को भी जानने वाला है। वहां तो :

मंदा चंगा आपणा,

आपे ही कीता पावणा॥ *(महला १, ४७०)*

अनुसार हमारे अच्छे-बुरे किए हुए कर्मों के आधार पर ही उसने

निर्णय करना है कि हमने इस संसार में रहते हुए क्या-क्या कार्य किए हैं।

मृत्यु उपरांत उपरोक्त पंक्तियां पढ़ने-पढ़ाने के स्थान पर हमें अपने जीवित रहते ही यह पंक्ति बार-बार पढ़ सुन कर जहां इस की महत्तता को समझना चाहिए वहीं सच्चा उच्च स्थान प्राप्त करने की तैयारी के लिए सच्चा व पवित्र जीवन बनाने के लिए योग्य प्रयत्न करते रहना चाहिए ताकि मृत्यु उपरांत गुरमुखों की लाईन में खड़े होने के योग्य बन सकें।

मृतक की तस्वीर

मृतक के भोग के समय श्रद्धांजलियां भेंट करने के गलत रिवाज के साथ-साथ एक और पाखंड यह चल पड़ा है कि मृतक की तस्वीर श्री गुरू ग्रंथ साहिब जी की हजूरी में रखी जा रही है।

कई लोग यह तस्वीर श्री गुरू ग्रंथ साहिब जी के समक्ष रख देते हैं जहां संगतें माथा टेकती हैं। ऐसा लगता है माथा टेकने वाला गुरू साहिब के साथ मृतक प्राणी की फोटो को भी माथा टेक रहा है।

धनी लोग तो मृतक प्राणी की अत्यंत सुन्दर तस्वीर बनवा कर उस पर फूलों का सेहरा चढ़ा कर रखने लग पड़े हैं, जैसे किसी बड़े भजन बंदगी वाले या प्रसिद्ध महापुरुष की याद मनाई जा रही हो।

कुछ भी हो मृतक चाहे संत हो या लीडर, साधारण पुरुष, स्त्री हो या असाधारण सिफतों वाला, अमीर या गरीब हो, भोग के समय उसकी तस्वीर की नुमायश श्री गुरू ग्रंथ साहिब महाराज की हजूरी में करना विशुद्ध मनमति तथा अनुचित कार्यवाही है जिसका कोई अर्थ ही नहीं।

आश्चर्य की बात है कि मृतक के भोग के समय वहां बैठे सिंघ सभाओं के प्रधान, सेक्रेटरी, पंथक आगू तथा अन्य धार्मिक विचारों वाले पुरुष स्त्रियां इस तरह की मनमति तथा गुरमति विरोधी कार्यों को देख कर अपनी ज़ुबान तक नहीं खोलते, चूं तक नहीं करते।

अन्य दुख की बात यह होती है कि उपरोक्त धार्मिक रुचि वाले तथा गुरमति की कुछ सूझ रखने वाले मनुष्य इस मनमति के विरुद्ध कुछ कहने के स्थान पर समागम वाले घर के मुखिया सज्जन की व्यर्थ की सच्ची-झूठी श्लाघा कर देते हैं जिसका परिणाम यह होता है कि घर वालों की तसल्ली हो जाती है कि उन्होंनें भोग के समय जो किया है वह बिल्कुल गुरमत अनुसार है क्योंकि किसी ग्रंथी सिंघ, रागी सिंघ, प्रचारक या अन्य गांव शहर के नेता ने कोई किन्तु परन्तु नहीं किया।

यही कारण है कि जहां अन्य लोगों को इस प्रकार की मनमत की बातें करने में उत्साह मिलता है वहीं गुरमति विरोधी कार्य दिन प्रतिदिन बढ़ रहे हैं।

हमारे सिख घरों में मृतक के भोग के समय वह कौन सी बिपरन (ब्राह्मणी) की रीत है जो नहीं होती। किरिआ, वस्त्र, बर्तन, बिस्तर, फल, मिठाई, छाता आदि वस्तुएं मृतक प्राणी के लिए दीवान में रख कर नुमायश हमारे घरों में खूब धड़ल्ले से की जाती है। अन्तर केवल यह है कि उन घरों में यह सारी वस्तुएं ब्राह्मण या आचारजी ले जाता है, यहां इसको हमारे पाठी, ग्रंथी सिंघ समेट कर ले जाते हैं।

गुरू महाराज के खालसे प्रति कहे निम्नलिखित वाक्य, लगता है हमें भूलते जा रहे हैं :

जब इह गहै बिपरन की रीत॥

मै न करों इन की प्रतीत॥

इस से पहली पक्तियां गुरू साहिब की यह हैं :

जब लग खालसा रहै निआरा॥

तब लग तेज दीउ मै सारा॥

गुरमति विरोधी कार्यों को यदि रोकना है तो हमारे धार्मिक नेता, सिंघ सभाएं तथा अन्य धार्मिक संस्थाओं के प्रबंधकों, प्रधानों तथा ग्रंथी पाठी सिंघों को महाराज की उपरोक्त पंक्तियों की ओर विशेष ध्यान देकर अमल में लाना पड़ेगा, तथा उन्हें इस प्रकार की अन्य गुरबाणी की पंक्तियों की व्याख्या का विस्तार के साथ संगतों में प्रचार करना पड़ेगा।

नेताओं को अकाली फूला सिंघ की तरह निडर होकर आगे आना पड़ेगा। इन व्यर्थ के रिवाजों के विरुद्ध जिहाद करने के लिए प्रत्येक सिख कहलाने वाले को जहां स्वयं गुरमत के प्रारम्भिक तथा आवश्यक सिद्धान्तों से ज्ञात होना पड़ेगा, वहीं इसके प्रचार के लिए तन, मन तथा धन भी लगाना पड़ेगा।

जहां कहीं ऐसी कुरीतियां होती हों वहां बिना किसी लिहाज के विरोध करना पड़ेगा। गुरमति के प्रचार के अन्य साधनों को अपनाने के साथ-साथ मृतक के भोग के अवसर पर श्री गुरू अमरदास जी की अंतिम वसीअत जो रामकली राग में "**सदु**" शीर्षक से श्री गुरू ग्रंथ साहिब में अंकित है, उसकी व्याख्या अवश्य करनी होगी।

इस प्रकार यह कुरीतियां हट सकेंगी।

*****